महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, बड़ौदा

पी-एच. डी. [हिन्दी] उपाधि हेंतु प्रस्तुत संक्षिप्त रुपरेखा

[Synopsis]

# “श्री अमृतलाल नागर और गंगाप्रसाद मिश्र के कथा-साहित्य में प्रतिबिम्बित लखनऊ का जन-जीवन”


अनुसंधित्सु

**विजय प्रकाश यादव**

निर्देशक

**डॉ० दीपेन्द्रसिंह जाडेजा**

प्रोफ़ेसर

हिन्दी विभाग, कला संकाय

महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, बड़ौदा


2021

**भूमिकाः-**

लखनऊ उस क्षेत्र में स्थित है जिसे ऐतिहासिक रूप से अवध क्षेत्र के नाम से जाना जाता था । लखनऊ हमेशा से एक बहुसांस्कृतिक शहर रहा है । यहाँ के शिया नवाबों द्वारा शिष्टाचार, खूबसूरत उद्यानों, कविता, संगति और बढ़िया व्यंजनों को हमेशा संरक्षण दिया गया । लखनऊ को नवाबों के शहर के रूप में भी जाना जाता हैं । इसे पूर्व का स्वर्णनगर और शिराज-ए-हिन्द के रूप में जाना जाता हैं । आज का लखनऊ एक जीवंत शहर है जिसमें एक आर्थिक विकास दिखता है और यह भारत के तेजी से बढ़ रहे गैर-महानगरों के शीर्ष पन्द्रह में से एक है । यहाँ अधिकांश लोग हिन्दी बोलते हैं । इसके अलावा यहाँ उर्दू और अंग्रेजी भी बोली जाती है ।

लखनऊ प्राचीन कोशल राज्य का हिस्सा था । यह भगवान राम की विरासत थी जिसे उन्होंने अपने भाई लक्ष्मण को समर्पित कर दिया था । अतः इसे लक्ष्मणावती, लक्ष्मणपुर या लखनपुर के नाम से जाना गया, जो बाद में बदलकर लखनऊ हो गया । लखनऊ के वर्तमान स्वरुप की स्थापना नवाब आसफुद्दौला ने 1775 ई० में की थी । प्रसिद्ध भारतीय नृत्य 'कथक' ने अपना स्वरुप लखनऊ में ही पाया था । अवध के अन्तिम नवाब वाजिद अली शाह कथक के बहुत बड़े  ज्ञाता एवं प्रेमी थे । लच्छू महाराज, अच्छन महाराज, शंभु महाराज एवं बिरजू महाराज ने इस परम्परा को जीवित रखा है ।

'लखनऊ' भारत के सर्वाधिक आबादी वाले राज्य उत्तर प्रदेश की राजधानी है । इस शहर में लखनऊ जिले और लखनऊ मंडल के प्रशासनिक मुख्यालय भी स्थित हैं । लखनऊ शहर अपनी खास नज़ाकत और तहबीज वाली बहुसांस्कृतिक खूबी, दशहरी आम के बागों तथा चिकन की कढ़ाई के काम के लिए जाना जाता है ।

कथा-साहित्य आधुनिक युग की सर्वाधिक लोकप्रिय विधा है । यह अपनी व्यापकता, विराटता और विविधता के कारण मानव जीवन को समग्रतः अंकित करने एवं उसकी व्यंजना, विवेचना करने में सशक्त हैं । प्रायः सभी विचारकों और विद्वानों ने मानव जीवन के चित्रण और व्याख्या करने में कथा साहित्य की सार्थकता मानी है ।

प्रेमचन्द की परम्परा का विकास अमृतलाल नागर और पंडित गंगाप्रसाद मिश्र के कथा साहित्य में परिलक्षित होता हैं । कथानक सम्बन्धी नवीन प्रयोग, भाषा-शैली  की विविधता तथा

पात्रों का जीवन्तता के कारण ही नागर और मिश्र जी के कथा साहित्य प्रेमचन्द्र की भांति जन-सामान्य से आत्मीय सम्बन्ध स्थापित कर लेते हैं । प्रेमचन्द्र यदि ग्रामीण जीवन के कुशल चितेरे हैं तो अमृतलाल नागर और गंगाप्रसाद मिश्र जी ने नगर जीवन के मध्यवर्ग का बड़ी बारीकी से अध्ययन कर उसे अपने कथा साहित्य का प्रमुख विषय बनाया है । यद्यपि नागर जी और मिश्र जी ने साहित्य की विभिन्न विधाओं पर अपनी कलम चलाई है, तथापि यह बात बिना विवाद के कही जा सकती है कि नागर जी का उपन्यासकार रूप ही सर्वाधिक प्रभावशाली है और मिश्र का भी । साहित्य जगत में नागर जी उपन्यासकार के रूप में जाने-पहचाने जाते है । एक भेट वार्ता में उन्होंने यह बात स्वीकार भी की है । **"मेरी सारी दृष्टि शायद उपन्यासकार होने के लिए ही सधी थी ।"**

लखनऊ के जिन चार उपन्यासकारों का नाम हिन्दी साहित्य में अमर है, वे हैं – यशपाल, भगवतीचरण वर्मा, पं० गंगाप्रसाद मिश्र और अमृतलाल नागर । लखनऊ की चर्चा के साथ ही अमृतलाल नागर एवं पं० गंगाप्रसाद मिश्र जी का स्मरण हो आता है । इन चारों में सच्चे लखनवी अमृतलाल नागर तथा गंगाप्रसाद मिश्र ही हैं । यशपाल पर पंजाब का, भगवतीचरण वर्मा पर इलाहाबाद का पर्याप्त प्रभाव है । परन्तु नागर और मिश्र जी की रचनाओं में सच्चा लखनऊ देखा जा सकता है । नागर जी लखनऊ, खासकर चौक से, उसके वातावरण और बोली बानी से इस प्रकार घुल-मिल गए थे कि वे और चौक एक दूसरे के पर्यायवाची बन गए थे । नागर जी का आवास चौक में रहा है और क्षेत्र के बच्चे, बूढ़े, जवान सभी उनसे परिचित रहें हैं ।

लखनऊ के साहित्यिक परिवेश में पं० गंगाप्रसाद मिश्र जी भी एक अभिन्न अंग थे । कथाकार यशपाल जी, भगवतीचरण वर्मा जी, अमृतलाल नागर जी उनके परम आत्मीय थे । श्रीलाल शुक्ल जैसा उपन्यासकार उनको अतीव आदर देता था । उनके साथ उनकी बैठकें जब-तब हुआ करती थीं । कथाकार वृंदावन लाल वर्मा, कविवर हरिवंश राय 'बच्चन', धर्मवीर भारती जैसे रचनाकार उनके स्नेही स्वजन थे । रामविलास शर्मा, शिवमंगल सिंह 'सुमन', 'रामेश्वर शुक्ल 'अंचल', सुरेश अवस्थी, बालकृष्ण राव जैसे साहित्यकार उनके अंतरंग मित्रों में थे । वे एक साथ उपन्यासकार, कहानीकार, समीक्षक, नाट्यलेखक, संस्मरण-लेखक तथा निबन्धकार थे । वे साहित्य-सर्जक थे, साहित्य-चिन्तक थे, साहित्य के प्रति समर्पित व्यक्ति थे, लेकिन साहित्यिक गुटब़ाज नहीं थे । वे जो कुछ भी थे, अपने आप बने थे, स्वंम रचित थे, स्वंय सिद्ध थे; इसलिए साहित्यिक शिविरो से उपेक्षित भी रहे, निर्गुट कलाप्रेमियों के द्वारा सम्मानित भी हुए ।

अमृतलाल नागर और गंगाप्रसाद मिश्र के कथा साहित्य में लखनऊ के जन-जीवन से सम्बन्धित सामाजिक, सांस्कृतिक अध्ययन से अभिप्राय है कि कथा-लेखन में लखनऊ का स्वरूप क्या है और किस प्रकार से व्यक्त हुआ हैं । रचनाकार जिस लखनऊ के परिवेश में रहता है उसकी अभिव्यक्ति उनकी रचना में दिखाई पड़ती है । इसीलिए अमृतलाल नागर और गंगाप्रसाद मिश्र ने अपने साहित्य में लखनऊ के सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्वरूप की अभिव्यक्ति की है तथा नागर जी और मिश्र जी ने समय और समाज की वस्तु स्थिति को अपने कथा साहित्य में व्यक्त किया है । वैसे तो नागर जी और मिश्र जी के कथा-साहित्य में लखनऊ एक जीवंत पात्र के रूप में उपस्थित है ।

पं० गंगाप्रसाद मिश्र जी ने अपने उपन्यास 'तस्वीरें और साये' में शीतकालीन लखनऊ का वर्णन करते हुए लिखा है – 'गुलाबी जाड़ा-लखनऊ का एक मुहावरा है और सही नक्शा लखनऊ वालों के दिमाग में ही होता है । दशहरे के बाद जब शरद् ऋतु अपनी पूरी जवानी पर आती है वातावरण में एक हल्की सी खुनकी होती है । हवा में सुखद शीतलता आ जाती है । बरसात की उमस से मुक्ति मिल जाती है । आसमान में कालिमा के स्थान पर स्वच्छ नीलिमा आँखो को शीतलता प्रदान करती है । चाँदनी ऐसी गहरी छिटकती है, जैसे मोहब्बत का रंग जग गया हो । धूप की तलखी कम हो जाती है और वह हल्के-हल्के बदन को सहलाने लगती है । कुल्फी में वह मजा नहीं आता । माल मक्खन दूध से उठने लगता है । बिस्तर में लेटे-लेटे हल्के गरम चादरों का आनन्द लेते हुए और खोंचे वालों की आवाजें भारी पड़ने लगती है । गंडेरियों और गोला-गरी बेचने वालों के सामने मूँगफली के ढेर दिखलाई देने लगते हैं । काफी रात तक सुनाई देता रहता है – चीना बादाम है, बालू में भूनी है । गर्म न हो तो पैसा न देना । दाम तो मसालों के हैं बाबूजी ! चीना बादाम मुफ्त में हैं । तुरई लौकी से जान छूटती है । नया आलू । मीठी विलायती मटर, गोभी, नरमकल्ला, बाजार में आकर खाने की बदमजगी दूर कर देते हैं । हलवाइयों की दुकान पर थालों में सोहनहलुआ सजने लगता है । तब लखनऊ के लोग स्वप्निल आँखों से कहते हैं – गुलाबी जाड़ा आ गया भैया ! लखनऊ का सबसे सुहावना, सबसे सुनहरा मौसम ।

चौक ! वह स्थान, जिसने लखनऊ को बनते-बिगड़ते देखा है । इतिहास भी इस बात का साक्षी है, क्योंकि 19वीं शताब्दी के भारतीय इतिहास के जिस पन्ने पर लखनऊ ने अपनी ऐतिहासिकता प्रमाणित की है, उसके केन्द्र में वे सारी बातें रही हैं , जिसका यह चौक रहा है । लखनऊ का चौक..... महज एक स्थान नहीं है, वह एक परम्परा है, संस्कृति है, लखनवी सभ्यता का जीता-जागता दर्पण है, अमृतलाल नागर अपनी कहानी 'एक दिल हजार दास्तां' में लखनऊ

के चौक का वर्णन करते हुए लिखते हैं – "वह पुरानी दुपहिया टोपी, दुपट्टा, धोती या छकलिया अँगरखा, चूड़ीदार पाजमा, पट्टेदार बाल, वह हुक्का और वो अदा ! वो विरासत से रँगा हुआ चौक, जहाँ सुरमई आँखों का मेला लगता था, उनके साथ रेशमी रुमालों से ढके हुए, मुट्ठियों में मीजते हुए हजरत वटेर भी तशरीफ लाया करते थे । मेंहँदी से रची हुई दाढ़ी वाले एक मियाँजी भी लंबा कुर्ता और ढीली मोहरी का पाजमा पहने कंधे पर दुपट्टा डालकर शाम को एक पतली-सी संदूकची में इत्र-फुलेल, अंजन, मंजन और मिस्सी के अलावा नए फैशन के पाउडर, लेवेंडर और आटो दिल बहार लिए कान पर हाथ लगाकर कोठेवालियों को पुकारा करते थे" "माशूकाना ! ..... लिविंडर भी है, तेल भी है और दिल बहार भी है ! ....." और, तमाम चीजों का नाम लेते हुए फेरी लगाते थे । गोल दरवाजे के फाटक पर फूलों के गहने और गजरे लेकर माली अपने बेला, चमेली और मोतियों की वाहवाही में आप ही मगन रहते थे । बाजार के ऊपर रूप के हाट की सुंदरियाँ भी रहती थीं । साग-सब्जी गा-गाकर बेची जाती थीं । गली-सड़कों में हर वक्त बड़े-बड़े तानसेन राग अलापते घूमा करते थे । कहीं तीतर लड़ाए जाते थे, कहीं बटेर और बुलबुल । चारों तरफ खूब जगर-मगर रहती थी । वहाँ बातचीत करने वाले लोग भी मिल जाएँगे, जो बातों का खेल करके, बातों ही बातों में आपको कहाँ-से कहाँ पहुँचा देंगे । जहाँ कुछ नहीं है, वहाँ सब कुछ मौजूद करवा देंगे ।

चौक ने लखनऊ को बहुत कुछ दिया । जहाँ नवाबी संस्कृति की एक मजबूत परंपरा कायम की, वहीं उसे तोड़ा भी । गोल दरवाजा के इर्द-गिर्द बसने वाली तवायफों ने लखनऊ के शासकों पर अप्रत्यक्ष रूप से शासन किया । रईसों और नवाबों को अपनी ओर आकर्षित किया और लखनऊ को वह रंग प्रदान की जो आज तक किसी और शहर को नहीं मिल सकी और न शायद कभी मिले । क्या चौक ने केवल नवाबी सभ्यता और संस्कृति की परम्परा को ही जीवित रखा या कुछ और भी दिया ? दिया साहित्य को, हिन्दी साहित्य को भारतीय साहित्य को वह मसिजीवी लेखक, जो तारे की तरह आज भी आसमान में चमक रहा है । महज अँधेरे में नहीं, रोशनी में भी । इसी चौक में अमृतलाल नागर जैसे साहित्यकार ने अपनी रचनाशीतला की सार्थक यात्रा शुरू की । इसी चौक ने अमृतलाल नागर को बार-बार अपनी ओर खींचा । कभी बंबई से तो कभी आगरा से । नागर जी जहाँ भी रहे अपने रामजी के प्रदेश अवध को, नवाबों के शहर लखनऊ को और भारतीय जन-जीवन के जीते-जागते चौक को कभी नहीं भूल पाए ..... यहाँ की याद उन्हें बराबर आती रही । अपनी गुजराती संस्कृति में रहने के बाद भी लखनवी चौक को अपनाया, गुजराती संस्कृति को लखनवी जामा पहनाया ..... एक स्वस्थ और सुन्दर समाज

बनाने की कोशिश की । अपने साहित्य में इस संस्कृति और समाज को जीवंत किया ।

लखनवी समाज और संस्कृति की एक मजबूत परंपरा के बीच से गुजरते हुए नागर जी को बराबर इस बात का अहसास होता था कि उनका मन अब लखनऊ रंगत में रंग चुका है और इसका एक ही उपाय है ..... इस लखनवी परम्परा को सुरक्षित रखा जाय, जो नए जमाने के साथ धीरे-धीरे लुप्त होता जा रहा था ।

किसी भी कला की आराधना अथवा साहित्य-सृजन में लगे हुए व्यक्ति, जो उसे अपने जीविकोपार्जन का साधन बना लेते हैं, अक्सर बड़ी कठिनाइयों के दौर से गुजरते हैं । उनका त्याग स्तुत्य होता है , परंतु वे व्यक्ति जो अपनी विवशताओं, पारिवारिक उत्तरदायित्व आदि के कारण उसे अपनी रोजी-रोटी नहीं बनाते, कोई नौकरी या व्यवसाय कर लेते हैं और उससे जो समय बचता है, उसमें अपनी सामर्थ्य भर साहित्य का सृजन करते है; उनका योगदान अतिशय मूल्यवान होता है । ऐसे ही व्यक्ति अमृतलाल नागर और पंडित गंगाप्रसाद मिश्र जी थे तथा अपने साहित्य में लखनऊ समाज के जन-जीवन का वर्णन किया है ।

अमृतलाल नागर और पंडित गंगाप्रसाद मिश्र जी कथा-साहित्य में लखनऊ के निम्न मध्यवर्ग एवं मध्यवर्ग की पीड़ा, घुटन, एकाकीपन, मजदूरों का शोषण, तनाव का चित्रण, पारिवारिक विघटन, तलाक की समस्या, खेलों में भ्रष्टाचार आदि का बड़ी सूक्ष्मता से वर्णन मिलता है । स्वतंत्र्योत्तर कथा लेखकों में नागर जी एवं मिश्र जी ने अपने कथा-साहित्य में लखनऊ के सामाजिक जन-जीवन का वर्णन प्रमुखता से किया है और हिन्दी कथा-साहित्य में जो योगदान दिया है उसे कोई भी नकार नहीं सकता । इस युग में हिन्दी कथा साहित्य में प्रवेश करने वाले अमृतलाल नागर और पं० गंगाप्रसाद जी हिन्दी लेखकों में से एक है । हिन्दी कथा-साहित्य के क्षेत्र में उनका प्रमुख स्थान है ।

अमृतलाल नागर और गंगाप्रसाद मिश्र जी के कथा-साहित्य में लखनऊ के अनेक प्रकार की समस्याओं का निरूपण प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में हुआ है । इन समस्याओं के अन्तर्गत-पारिवारिक समस्याएँ, सामाजिक समस्याएँ, आर्थिक समस्याएँ, राजनैतिक समस्याएँ एवं धार्मिक समस्याओं के साथ-साथ लखनऊ के अन्य सामाजिक जन-जीवन का चित्रण नागर जी एवं मिश्र ने किया है । अतः मैंने अपना शोध विषय प्रो. दीपेन्द्रसिंह जाडेजा सर के निर्देशन में शोध का विषय रखा – **"श्री अमृतलाल नागर और गंगाप्रसाद मिश्र के कथा-साहित्य में प्रतिबिम्बित लखनऊ का जन-जीवन"** आलोच्य विषय को केन्द्र में रखते हुए लखनऊ के जन-जीवन के

विषय में अध्ययन करने का मेरा उद्देश्य था । इसके उपरान्त चार-पाँच साल के कठोर परिश्रम, अध्ययन, अवगाहन, लेखन और पुनर्लेखन के बाद मैं प्रस्तुत शोध-प्रबंध प्रस्तुत कर रहा हूँ । शोध -प्रबंध के विषय के साथ न्याय करने हेतु और उसके समुचित सम्गुंफन के लिए हमने उसे निम्नलिखित षष्ठ अध्यायों में विभक्त किया है।

**प्रथम अध्याय :** अमृतलाल नागर का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

**द्वितीय अध्याय :** गंगाप्रसाद मिश्र का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

**तृतीय अध्याय :** अमृतलाल नागर के कथा-साहित्य में प्रतिबिम्बित लखनऊ का जन-जीवन

**चतुर्थ अध्याय :** गंगाप्रसाद मिश्र के कथा-साहित्य में प्रतिबिम्बित लखनऊ का जन-जीवन

**पंचम् अध्याय :** अमृतलाल नागर और गंगासागर मिश्र के कथा-साहित्य में समसमायिक लखनऊ

**षष्ठ अध्याय :** अमृतलाल नागर और गंगाप्रसाद मिश्र के कथा-साहित्य में भाषा-शिल्प

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध का आलोच्य विषय "अमृतलाल नागर और गंगा प्रसाद मिश्र के कथा साहित्य में प्रतिबिम्बित लखनऊ का जन-जीवन" है । हिन्दी साहित्य में नागर जी एवं मिश्र जी के समग्र साहित्य पर अनेक शोध-कार्य उपलब्ध हैं किन्तु उनके कथा साहित्य में लखनऊ के जन-जीवन पर शोध कार्य का अभाव ही रहा है । नागर जी और मिश्र जी के विराट व्यक्तित्व से अन्वित उनके कथा-साहित्य में लखनऊ के जन-जीवन का विश्लेषण अभी तक नही हुआ था । इस दृष्टि से नागर जी और मिश्र के कथा-साहित्य में लखनऊ का विश्लेषण और मूल्यांकन मेरी ओर पहला मौलिक प्रयास है ।

आखिर ऐसा क्यो होता है? क्यों कोई व्यक्ति एक शहर में रहते हुए वहाँ का हो जाता है? अमृतलाल नागर और गंगा प्रसाद मिश्र के साथ भी यही हुआ । ये दोनों साहित्यकार एक

नागरिक की तरह लखनऊ में केवल निवास ही नहीं किया, बल्कि उसे जिया भी तथा अपनी कृतियों में उस लखनवी समाज और संस्कृति को सुरक्षित भी किया । यही दोनों साहित्यकार चाहते भी थे, क्योकि आजादी के बाद जिस रफ्तार से लखनऊ के सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन में विखराव आया, वह नागर जी और मिश्र जी के लिए असह्य था । उन्हें इस बात पर दुःख था कि लखनऊ की वे सारी परम्पराएँ एक-एक कर मिटती जा रही हैं, जिन्हें नवाबी काल में लखनऊ की जनता ने एक लम्बें संघर्ष के बाद बनाया था । खुद उनका विकास भी उसी लखनवी परिवेश में हुआ । इसलिए नागर जी और मिश्र जी को अपने लखनऊ से प्यार था, वहाँ के लोगों से लगाव था, हिन्दू-मुस्लिम एकता पर गर्व था तथा उस खुदा पर भी गर्व था, जिसने लखनऊ जैसे नगर को आबाद किया । प्रस्तुत शोध में अमृतलाल नागर और गंगा प्रसाद मिश्र के इसी पक्ष के मूल्यांकन पर मैंने अधिक ध्यान दिया है और यह मुझे जरूरी भी लगा । कारण नागर जी एवं मिश्र जी के व्यक्तित्व तथा कृतित्व में जिस तरह से लखनऊ के प्रति गहरा आकर्षण मिलता है, वह किसी अन्य रचनाकार में किसी स्थान के प्रति नहीं दिखलाई पड़ता ।

उपर्युक्त मुद्दों की चर्चा के उपरान्त अध्याय के अन्त में समग्रावलोकन की प्रक्रिया द्वारा अध्यायगत निष्कर्ष को रखा गया है । “सन्दर्भानुक्रम” को अध्याय के अंत में ही रखा गया है । उसमें सहायक ग्रन्थ या संदर्भ ग्रन्थ का नामोल्लेख, उनके लेखक तथा पृष्ठ-संख्या इत्यादि को विधिवत् प्रस्तुत किया है । सन्दर्भ-ग्रन्थ के स्थान पर यदि पत्र-पत्रिका हुए तो उनका भी विधिवत् उल्लेख हुआ है – महीना, वर्ष, पृष्ठ-संख्या, लेखक का नाम आदि के साथ / और लगभग यही प्रविधि शोध-प्रबन्ध के अन्य अध्यायों में भी रही है ।

प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध छः अध्यायों में विभक्त हैं । प्रथम अध्याय के अन्तर्गत **‘अमृतलाल नागर का व्यक्तित्व एवं कृतित्व’** हैं जिसके अन्तर्गत जन्म, शिक्षा, पारिवारिक सम्बन्ध, साहित्य सृजन का प्ररम्भ एवं व्यवसाय, प्रेरणा-प्रोत्साहन पर चर्चा करते हुए उनके व्यक्तित्व के विविध पहलुओं पर गम्भीरता से विचार विमर्श किया है साथ ही उनके समस्त कृतियों के सम्बन्ध में जानकारी दी है, तथा उनके विशेष प्रवृत्तियो पर गहरा मंथन किया गया है साथ ही साहित्य सृजन के दौरान उन्हें जो सम्मान एवं पुरस्कार मिले हैं, उनका भी उल्लेख किया गया है । इसके साथ-साथ अमृतलाल नागर के व्यक्तित्व के विविध रूपों की भी चर्चा की गई है । जैसे वाह्य-व्यक्तित्व, आंतरिक-व्यक्तित्व तथा लेखकीय व्यक्तित्व का आकलन किया गया है । उसके बाद अमृतलाल नागर के जन्म से लेकर निधन तक की भी चर्चा की गई है । लेखन कार्य की प्रेरणा कहाँ से मिला इसका भी उल्लेख किया गया है । अमृतलाल नागर जी के कृतित्व पर प्रकाश

डालते हुए उपन्यास साहित्य, कहानी साहित्य, समीक्षा, निबन्ध, बालसाहित्य, अनुवाद-कार्य, संपादन-कार्य, इन्टरव्यु, नाटक आदि पर चर्चा की गई है और इसके साथ नागर जी का वाह्य जीवन लखनऊ समाज और संस्कृति के आकलन में लगा दिखाई देता है । इसको आत्मसात कर उन्होंने अपने कथा साहित्य में समाज और संस्कृति की यथार्थ छवि को प्रस्तुत किया है ।

शोध प्रबन्ध का द्वितीय अध्याय **'गंगा प्रसाद मिश्र का व्यक्तित्व एवं कृतित्व'** है । व्यक्तित्व के अन्तर्गत मैंने मिश्र जन्म, शिक्षा- दीक्षा, पारिवारिक जीवन, व्यवसाय, माता-पिता, अभिरूचियाँ, वैवाहिक जीवन, निःस्वार्थ व्यक्तित्व एवं प्रचार-प्रियता से दूर रहना आदि पहलुओं पर गहराई से अध्ययन किया है । इसके साथ-साथ गंगा प्रसाद मिश्र जी के व्यक्तित्व के विविध रूपों की भी चर्चा की गई है जिसमे दहेज-रहित विवाह करना, विवाह के उपरान्त पत्नी सरोजिनी ने मिश्र जी को पारिवारिक चिन्ता से सदैव मुक्त रखकर साहित्य सृजन के लिए सदैव स्वतन्त्र रखा आदि । कृतित्व के अन्तर्गत मिश्र जी के समग्र साहित्य पर प्रकाश डाला गया है जिसमें कथा साहित्य के अन्तर्गत उपन्यास और कहानी को लिया गया है । तथा मिश्र जी के अन्य विधाओं पर भी प्रकाश डाला गया है जिसमें संस्मरण, नाटक, समीक्षा, अनुवाद-कार्य, निबन्ध, बाल साहित्य आदि के विषय में विस्तार से चर्चा की गई है । अध्याय के अंत निष्कर्ष पर विचार किया गया है ।

शोध प्रबन्ध का तृतीय अध्याय **'अमृतलाल नागर के कथा-साहित्य में प्रतिबिम्बित लखनऊ का जन-जीवन '** है । जिसके अन्तर्गत लखनऊ का सामाजिक जन-जीवन, लखनऊ में चौक का जन-जीवन तथा लखनऊ के सांस्कृतिक जन-जीवन परप्रकाश डाला गया है । सामाजिक जन-जीवन के अन्तर्गत नवाबी काल में लखनऊ का सामाजिक जीवन, नगरीय समाज का जीवन, मध्यवर्गीय समाज का जीवन एवं उच्च वर्गीय समाज के जीवन पर चर्चा की है । लखनऊ के सांस्कृतिक जन-जीवन के अन्तर्गत लोक संस्कृति, धार्मिक जीवन, पर्व, त्यौहार और मेले, लखनऊ के लोकगीत, रिति-रिवाज, प्रथा-परम्परा, वेश-भूषा, खान-पान और मनोरंजन, बोलचाल आदि पर प्रकाश डाला गया है । चौक के जन-जीवन के अन्तर्गत चौक की सामाजिक संरचना, चौक का सामाजिक जीवन के महत्वपूर्ण पहलुओं का आकलन करने के बाद मैंने निष्कर्ष पर विचार किया है ।

शोध प्रबन्ध का चतुर्थ अध्याय **'गंगा प्रसाद मिश्र के कथा साहित्य में प्रतिबिम्बित लखनऊ का जन-जीवन'** है । इस अध्याय के अन्तर्गत मिश्र जी के कथा साहित्य में लखनऊ का सामाजिक जन-जीव न लखनऊ का सांस्कृतिक जन-जीवन पर विस्तृत चर्चा की गयी है ।

सामाजिक जन-जीवन के अन्तर्गत ग्रामीण समाज, नगरीय समाज, मध्यवर्गीय समाज एवं वंचित और दलित समाज आदि के जन-जीवन का आकलन करके विस्तृत विवेचना किया है । सांस्कृतिक जन-जीवन के अन्तर्गत धार्मिक जीवन, पर्व, त्यौहार और मेले, रिति-रिवाज, प्रथा-परम्परा, खान-पान और मनोरंजन एवं विभिन्न खेलों पर प्रकाश डाला गया है । आर्थिक जन-जीवन के अन्तर्गत आर्थिक अभाव की समस्या, आर्थिक तंगी के कारण उत्पन्न नफरत की भावना, शिक्षा के चलते उत्पन्न आर्थिक समस्या, पूँजिपतियों द्वारा आर्थिक शोषण, महँगाई की समस्या आर्थिक तंगी के चलते वैवाहिक जीवन में तनाव आदि का आकलन किया है । अध्याय के अन्त में निष्कर्ष पर विचार पर किया है ।

शोध प्रबंध का पंचम् अध्याय **'अमृतलाल नागर तथा गंगा प्रसाद मिश्र के कथा साहित्य में समसमायिक लखनऊ'** हैं । इस अध्याय में अमृतलाल नागर और पं० गंगा प्रसाद मिश्र जी के कथा साहित्य में लखनऊ का जन-जीवन किस प्रकार था और आज के लखनऊ का जन-जीवन किस प्रकार है, इस पर बारीकी से अध्ययन करके विस्तृत रूप से चर्चा की गई है । इसी अध्याय में नागर जी और मिश्र जी के अन्य परिप्रेक्ष्य का भी विशद विवेचन किया है जैसे – लेखन में सामयिक या शाश्वत सवाल । मध्यकालीन भक्ति आन्दोलन के सन्दर्भ में अमृतलाल नागर जी ने 'मानस का हंस' और 'खंजन नयन' जैसी कृतियों की रचना की, जिसमें गोस्वामी तुलसीदास और सूरदास को आपने अपनी सर्जना का केन्द्र बनाया है । जबकि इस आन्दोलन में कबीर सर्वाधिक प्रगतिशील रहे हैं । लेकिन आपने उन पर कुछ नही लिखा – ऐसा क्यों ?

सबसे बड़ी बात तो यह है कि लेखन तो सामयिक ही होता है । सृजनात्मक लेखन में भले ही हम इतिहास के पुराने दिनों की पृष्ठि भूमि अपनी कथाओं में क्यों न सँजोयें । क्योंकि लेखक अपने पिछले जमाने की जिन अच्छाइयों और बुराइयों को वर्तमान काल में लिखता है, जिसमें कहीं न कहीं तो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सामयिकता का प्रभाव पड़ता ही है । इसकी वजह यह है कि मनुष्य का स्वभाव, उसकी भावात्मक या बौद्धिक गतिविधियाँ कुछ सामयिक परिवर्तन के बाद भी सार्वकालिक हैं । वह हमेशा रहती हैं ऐसा नहीं कि किसी की रचना का मूल्यांकन काल ही करता है । यदि मूल्यांकन काल करता तो आज हम 'महाभारत', 'दशकुमार चरित' जैसी कृतियों या कालिदास जैसे पुराने कवि अथवा तोल्सतोय, तुर्गनेव आदि रचनाएँ क्यों पढ़ते? जैसी समस्याओं का विस्तृत विवेचन किया है । अध्याय के अन्त में मैंने निष्कर्ष पर विचार किया है ।

शोध प्रबन्ध का षष्ठम् अध्याय **'अमृतलाल नागर और गंगाप्रसाद मिश्र के कथा साहित्य में**

**भाषा-शिल्प’** के रूप में हैं, इसमें अमृतलाल नागर और गंगा प्रसाद मिश्र जी के कथा-साहित्य की भाषा पर कथ्य-चेतना की दृष्टि से विचार किया गया है । नागर जी के कथा साहित्य के अन्तर्गत उपन्यास और कहानी संग्रह की परिगणना की गई है जिसमें ‘महाकाल’, ‘बूंद और समुद्र’ ‘शतरंज के मोहरे’, ‘सुहाग के नुपूर’ ‘अमृत और विष’, ‘सात घूँघट वाला मुखड़ा’, ‘नाच्यौ बहुत गोपाल एवं कहानी संग्रह ‘नवाबी मसनद’, ‘तुलाराम शास्त्री’ ‘पीपल की परी’, ‘कालदण्ड की चोरी’ आदि की चर्चा की गई है । इसी के साथ पं० गंगा प्रसाद मिश्र जी के कथा साहित्य के अन्तर्गत उपन्यास विधा में – ‘विराग’, ‘संघर्षो के बीच’ ‘तस्वीरें और साये’, ‘सोनारवाणी के पार’, ‘जहर चाँद का’, मुस्काँन है कहाँ’, ‘रांग साइड एंवं कहानी संग्रह ‘सरोद के गीत’, ‘आदर्श और यथार्थ’ ‘नयाखून’ ‘नई राहे’, ‘काँटों का ताज’ आदि उपन्यास और कहानी संग्रह की विधिवत चित्रण किया गया है ।

इस अध्याय में पात्र परिकल्पना और परिवेश-निर्माण में भाषा का योगदान को अमृतकाल नागर और गंगाप्रसाद मिश्र के कथा साहित्य के परिप्रेक्ष्य में विश्लेषित किया गया है । कथा साहित्य में पात्र-विशेष की कल्पना हम उनकी बोली-बानी के बगैर नही कर सकते । यह भी ध्यानार्थ रहे कि यहाँ भाषा के लिखित रूप में स्थान पर बोलचाल का रूप ही अधिक कारगर होता है । अतः जो लेखक या लेखिका लोगों के बीच से आते है वे ही यहाँ अधिक सफल रहते हैं । इस सन्दर्भ में प्रेमचन्द, रेणु, नागार्जुन, शैलेष मरियानी हमारे आदर्श हो सकते है तब तो वे लिखित भाषा का उपयोग करते है; किन्तु जब वे उसके भीतर आपको दिखाना चाहते है तब भाषा का बोलचाल का रूप ही सामने आता है । आंग्ल विवेचक राल्फ फोक्स महोदय उस गद्य को “मानव जीवन का गद्य” कहते है । वस्तुतः भाषा का असली मजा तो यही देखने को मिलता है । सभी आलोचक एक स्वर से कथा साहित्य (उपन्यास या कहानी) में पात्रानुकूल भाषा पर विशेष तवज्जो देते है । जिस तरह से कथा साहित्य (कहानी और उपन्यास) की भाषा पात्रानुकूल होती है या होनी चाहिए ठीक उसी तरह से उनकी भाषा देश काल या परिवेश के अनुरूप होगी । गांवों और नगरो की भाषा में निश्चयतः एक अन्तर मिलेगा; ‘देशकाल’ में देशगत या स्थानगत और प्रदेशगत परिवेश और कालगत परिवेश या किसी समय का परिवेश भिन्न-भिन्न हो सकता है । प्रदेश, स्थान, गांव और शहर के हिसाब से लोगों की बोली-बानी में फरक हो जाता है । मसल है – कोश कोश पर बदले पानी चार कोश में बानी । कई बार तो देखा गया है कि पास -पास के दो गाँवों के लोगों की बोली में थाड़ा-बहुत अन्तर आ जाता है । एक गाँव के लोगों में भी जाति और टोला के हिसाब से बोलचाल की भाषा के रूप और ‘टोन’ बदल जाते है ।

भाषा भावों और विचारों की संवाहिका है उसके अभाव में साहित्यकार के लिए अपनी

पूरी रचनात्मक सामग्री को सम्प्रेष्य बनाकर उसे पाठकीय संवेदना से जोड़ सकना अकल्पनीय है । कथा साहित्य में भाषिक संरचना के स्तर पर लेखकीय दायित्व अपेक्षाकृत बढ़ जाता है, क्योंकि कथाकार को निजी सर्जनात्मक व्यक्तित्व की अभिव्यंजना करने के साथ ही परिवेश के दबाव और विभिन्न पात्रों की व्यक्तिगत निजता को रूपाकार देते हुए भाषा को सँवारना पड़ता है । कथा कृतियों में भाषा की जीवंतता और सार्थकता तभी सिद्ध हो जाता है  जब वह साहित्यकार की अपनी भावात्मक प्रक्रिया में (दली) होने के साथ ही जन समाज की भाषा से भी अपनी घनिष्ठ सम्पृक्ति जताती रहे । जब तक लेखक को पात्रों के जीवन की, बोलचाल की, रंग-ढंग की, रीति-रिवाज की पूरी तरह जानकारी न हो जाय तब तक उसे लेखन में मजा नही आता ।

नागर जी और मिश्र जी की भाषा उनके भावों और उद्देश्यों की वाहिका है । वे सहज भाषा के समर्थक है किन्तु साहित्य में भाषा के इतने विपुल रूप दृष्टिगत होते हैं कि पात्र के स्तर, उसकी परिस्थिति तक चित्रित हो जाती है । किसी भी रचना की सशक्तता, सफलता, सम्प्रेषणीयता उसकी भाषा की शक्ति पर निर्भर करती है । भाषा का औचित्य और सार्थकता मानव के हर रूप विचार के साथ जुड़े हुए हैं । साहित्यक भाषा अपनी युगीन प्रवृत्तियों से प्रभावित अवश्य होती है किन्तु मुख्य रूप से रचनाकार का व्यक्तित्व अपने जीवन दर्शन और उद्देश्यों की सम्प्रेषणीयता के अनुसार उसे आत्मसात कर लेता है । फलतः भाषा की सशक्तता और स्वरूप, परिवर्तनशीलता को अक्षुण्य रखते हुए भी रचनाकार की प्रतिभा के अनुसार निर्मित हो जाते हैं । भाषा पात्रों के व्यक्तित्व को मूर्तिमान करती है और विभिन्न परिस्थितियों का अंतरंग चित्रण कर उसका निरीक्षण एवं व्याख्या प्रस्तुत करती है । अपने विभिन्न अनुभव तथा अनुभूतियों की अभिव्यक्ति कलात्मकता से भाषा द्वारा ही सम्प्रेषित की जाती है ।

नागर जी हिन्दी के उन थोड़े से लेखकों में हैं जिनका भाषा सम्बन्धी ज्ञान पर्याप्त व्यापक है । गुजराती उनकी मातृभाषा है । इसके अतिरिक्त हिन्दी, उर्दू, अंग्रेजी, मराठी, बंगला आदि भाषाओं के भी वे अच्छे जानकार हैं । तमिल भाषा से भी वे परिचित हैं और संस्कृत भाषा से भी उनको पर्याप्त रूचि है । केवल विविध प्रांतीय भाषाओं की जानकारी तक ही नागर जी का भाषा सम्बन्धी ज्ञान सीमित नही है । जहाँ तक हिन्दी प्रदेश की भाषाओं तथा बोलियों का सम्बन्ध है, वे उनसे भी घनिष्ठता पूर्वक परिचित हैं । केवल बोलियों से ही नहीं, उन्हें अपने-अपने ढंग, अपने-अपने लहजे, अपनी स्थानीय रंगत में घुल-मिलकर बोलने वालों से भी उनका निकट का सम्बन्ध है । शिक्षितों, अशिक्षितों तथा अल्प शिक्षितों, बूढ़े जवानो, ग्रामीणो, नागरिको, नारी-पुरूषों की भाषा । तात्पर्य यह है कि भाषागत सूक्ष्म से सूक्ष्म ब्यौरों में वे गए हैं और उन्होंने उसे

सफलतापूर्वक आत्मसात किया है । इस कथन के प्रचुर प्रमाण हमें उनके उपन्यासों में दृष्टिगोचर होते है, जो एक स्तर तक भाषा-विज्ञान के कोष तक कहे जा सकते हैं । नागर जी को प्रायः आंचलिक उपन्यासकार की जो संज्ञा दी जाती है, उसका एक प्रधान कारण उनकी भाषा यह वैशिष्य भी है । नागर जी की सजीव भाषा का निरूपण 'सुहाग के नुपूर' में प्रतीत होता है । मानव मन की शाश्वत अनुभूतियों का संवेदनापूर्वक चित्रण एक उपन्यास के आरम्भ में महालिंगम और पापनाशन के कथोपकथन द्वारा रोचकता से इस प्रकार प्रस्तुत किया गया है ।

"ठीक ही तो हैं । कन्नगी सुन्दरता में अद्वितीय है । उसे पाकर फिर किसी और की चाह क्यों रहे ?" नारी सौन्दर्य तभी तक आकर्षक रहता है, जब तक कि उस पर किसी पुरूष का अधिकार नहीं हो जाता है ।"

"और वेश्या का सौन्दर्य ?"

"वेश्या पूरे तौर पर कभी किसी के अधिकार में नहीं आता पापनाशन । उस पर अधिकार प्राप्त करने की भावना ही मृग-मरीचिका है, उसका आकर्षण अनन्त है ।" इस प्रकार नागर जी और मिश्रजी ने सबसे अधिक सहज बोलचाल की सादी भाषा को ही अपनाया है । षष्ठम् अध्याय में भाषा-शिल्प के इन आपामों का सोदाहरण विश्लेषण प्रस्तुत है ।

शोष-प्रबन्ध के अन्त में "उपसंहार" है । उपसंहार गोपुच्छवत् होता है । संक्षिप्त किन्तु शोध-प्रबन्ध का एक महत्वपूर्ण अंग । किसी विषय पर लिखे स्वतन्त्र ग्रन्थ में 'उपसंहार' न हो तो चल सकता है, पर शोध-प्रबन्ध में 'उपसंहार' न हो तो उसे शोध-प्रबन्ध ही न माना जाए । 'उपसंहार' में मैनें सम्पूर्ण शोध-प्रबन्ध के सार संक्षेप को रखने के उपरान्त उसकी उपादेयता, उसके महत्वपूर्ण निष्कर्ष और भविष्यत् संभावनाओं पर भी प्रकाश डालने का उपक्रम रखा है ।

प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध सुनिश्चित शोध-प्रविधि और शोध-प्रक्रिया के अन्तर्गत तैयार हुआ है । मेरे शोध-निर्देशक प्रो० दीपेन्दसिंह जाडेजा ने शुरू में ही मुझे कुछ स्तरीय शोध-प्रबन्धों को देख जाने की हिदायत दी थी । उन शोध प्रबन्धों को देख जाने पर मैंने शोध-प्रविधि के कतिपय नियमों एवं पद्धतियों को जाना है कि किस प्रकार सन्दर्भ, पाद-टिप्पणिया प्रस्तुत की जाती है । उनको प्रस्तुत करने की विधियाँ कौन सी हैं । ग्रन्थानुक्रमणिका किस प्रकार तैयार की जाती है, उसकी कितनी विधियाँ है आदि-आदि । इन सब नियमों का पालन करते हुए मैंने यह शोध-प्रबन्ध तैयार किया है जिसमें निम्नलिखित बातों का सविशेष ध्यान रखा गया है– **1.** प्रत्येक अध्याय के प्रारम्भ में प्रस्तावना रखा गया, जिसमें अध्याय के अन्तर्गत किन-किन मुद्दों को रखा जायेगा

उनका संक्षिप्त विवरण किया है । 2. समग्रावलोकन की प्रक्रिया द्वारा प्रत्येक अध्याय के अन्त में उस अध्याय के निष्कर्ष प्रस्तुत किए है । सन्दर्भानुक्रम को अध्याय के अन्त में रखा गया है जिसमें ग्रन्थ का नाम, लेखक का नाम और पृष्ठसंख्या का निर्देश है । पत्र-पत्रिका है तो महीना और दिनांक दिया गया है । 3. शोध-प्रबन्ध के अंत में 'ग्रन्थानुक्रमणिका' वकायदा क्रम अकारादि से पांच परिशिष्टों के अन्तर्गत प्रस्तुत किया गया है ।

यह शोध-प्रबन्ध सभी के आशीर्वाद से प्रस्तुत कर रहा हूँ । इस प्रसंग पर मैं अपनी माता, हमारी बोली में कहूं तो 'माई' कलावती देवी और पिता श्री राजपति के चरणों में अपनी श्रद्धाभक्ति निवेदित करते हुए उनके आशीर्वाद की कामना करता हूँ । इस महायज्ञ को पूरा करने के लिए मेरे परिवारजनों में मेरे बड़े भैया जयप्रकाश एवं छोटे भाई सुनील कुमार, अजीत कुमार तथा बहन ऊषा देवी एवं जीजा संजय कुमार के प्यार एवं सहयोग ने मेरा हौसला बढ़ाती रही । इसी के साथ मेरे अग्रबन्धु डॉ० ईश्वर अहिर सर ने मेरा हौंसला बढ़ाते हुए कदम-कदम पर साथ दिया । तत्पश्चात् मेरे शोधनिर्देशक प्रो० दीपेन्द्रसिंह जाडेजा सर को  धन्यवाद ज्ञापित करना चाहूँगा जिन्होंने शिष्य-रूप में स्वीकृत देकर उपकृत किया है । विभागाद्यक्ष प्रोफेसर दक्षा मिस्त्री को मैं कैसे विस्मृत कर सकता हूँ, जिन्होंने कदम-कदम पर मेरी सहायता की है । इसी के साथ प्रोफेसर ओ. पी. यादव सर ने भी कदम-कदम पर सहायता की एवं उत्साह-वर्धन किया है, अतः उनके प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करना मेरा परम कर्तव्य है । विभाग के अन्य प्राध्यापकों में प्रो. शन्नो पाण्डेय, डा० एन. एम. परमार, प्रो. कनुभाई निनामा, डॉ. अज़हर ढेरीवाला आदि का में हृदय पूर्वक अभार मानता हूँ । इन गुरूजनों ने मेरा मार्गदर्शन किया है और मैं उनके मार्गदर्शन से लाभान्वित हुआ हूँ । इस अवसर पर मैं उन सभी का धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ । इसके अतिरिक्त लखनऊ के ओजस्वी लेखक समीक्षक बन्धु कुशावर्ती साहब के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ । उनका पुत्रवत् प्रेम मुझे सम्पन्न हुआ है । समकालीन कथा साहित्य के प्रचंड पक्षधर है, उनके स्नेह और वात्सल्य से इस मुकाम तक मैं पहुँच पाया हूँ । इस अवसर पर उनके ऋण से उऋण कैसे हो सकता हूँ । उनके कई आलोचनात्मक एवं रचनात्मक ग्रन्थों से मैंने काफी सहायता ली है । महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के सेवानिवृत डॉ० इन्दु शुक्ला और डॉ० दयाशंकर शुक्ल का मैं तहे दिल से आभार मानता हूँ । जिनके मार्गदर्शन में मेरा शोध-कार्य सम्पन्न हुआ ।

प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध के लिए मैने अनेकानेक विद्वानों के ग्रन्थों का सहारा लिया है, उन सबके प्रति श्रद्धा-भक्ति व्यक्त करना मेरा सारस्वत धर्म है । अन्ततः कला संकाय के प्राचार्य

प्रोफेसर के. क्रिष्नन साहब का मैं हृदय पूर्वक आभार मानता हूँ क्योंकि उनके आशीर्वाद और तकनीकी मार्गदर्शन के अभाव में यह गुरूतर कार्य संभव न होता ।

प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध हिन्दी एवं भाषा में लखनऊ के योगदान तथा साथ में लखनाऊ के रचनाकारों का एवं लखनऊ के साथ-साथ उपलब्ध भारतीयता के सन्दर्भों को परखना है । साहित्य जगत में लखनऊ की अपनी एक पहचान है तथा लखनवी हिन्दी अपना एक विशिष्ट स्थान रखती है । इसका अध्ययन भी प्रस्तुत शोध में रचनाकारों के माध्यम से किया है । अन्त में, लखनऊ की प्रसिद्ध गज़ल गायिका बेगम अक्तर की गायी इस गज़ल के साथ विराम लूंगा –

**ऐ मोहब्बत तेरे अंजाम पे रोना आया,**

**जाने क्यूँ आज तेरे नाम पे रोना आया ।**

**यूँ तो हर शाम उमीदों में गुज़र जाती थी,**

**आज कुछ बात है जो शाम पे रोना आया ।**

**कभी तक़दीर का मातम, कभी दुनिया का गिला,**

**मंजिल-ए-इश्क में हर गाम पे राना आया ।**

**जब हुआ जिक्र ज़माने में मोहब्बत का शकील,**

**मुझे अपने दिल ए नाकाम पे रोना आया ।**